UNIVERSAL LIBRARY

OU_180875

UNIVERSAL LIBRARY

OSMANIA UNIVERSITY LIBRARY

Call No. H81.6/K96B Accession No. G.H. 439

Author कुमार।

Title बिखरे क्षण। 1952

This book should be returned on or before the date last marked below.

OSMANIA UNIVERSITY LIBRARY

Call No. H 81.6 / K 96 B Accession No. G.H. 439

Author कुमार ।

Title बिखरे क्षण । 1952

This book should be returned on or before the date last marked below.

प्रकाशक :
ओसवाल प्रेस
१८६, क्रोस स्ट्रीट
कलकत्ता-७

सर्वाधिकार सुरक्षित

प्रथम संस्करण १०००] [मूल्य १।)

मुद्रक :
महालचन्द बयेद
ओसवाल प्रेस
कलकत्ता

सूची

	गीत		पृष्ठ
१	नव संसार बसेगा कैसे		१
२	आज मेरी पीर ले लो !		३
३	मैं नहीं सम्मान लूँगा	....	५
४	प्यार सब कहते जिसे हैं—	....	८
५	हँसो न अब तुम चाँद अकेले !	....	१०
६	दिनमान पैदा हो रहा है	....	१२
७	धरती मेरी, अम्बर मेरा	....	१३
८	दीपक मेरा हँसे, जले !	....	१५
९	ज़िन्दगी के स्वप्न मेरे	....	१७
१०	रात जब होगी	....	१९
११	मैंने तो मुसकान दिया है	....	२१
१२	मनुहार बन जाओ	....	२३
१३	कह उन्हें दो—	....	२५
१४	गान में छाने दो तूफान	....	२७
१५	आग नहीं वह जो बुझ जाए	....	२९
१६	शक्ति पैदा कर रहा हूँ	....	३१

१७	मैं अपना भगवान हूँ	....	३३
१८	मृत्यु-जीवन	....	३५
१९	मेरा जीवन, मेरे गीत	....	३७
२०	चल रहा हूँ !	....	३९
२१	लेखनी का मान	....	४१
२२	मैं	....	४३
२३	मेरी ममता, मेरा प्यार	....	४५
२४	मैं जीवन का राही	....	४७
२५	नई ज़िन्दगी	....	४९

स्फुट—

२६	प्रातः स्मरणीय तुलसी के प्रति	....	५५
२७	आज प्रिय, दीपक जलाने दो !	....	५८
२८	जलो जलो तुम दीपावलियाँ !!	....	५९
२९	नाची छमछम किरण-परी !	....	६२

दो शब्द

'बिखरे क्षण' के विषय में कुछ लिखना मेरे लिए कठिन ही है। यदि कहूँ कि अपनी रचनाओं के विषय में मेरी धारणा अनिश्चित है, तो यह सत्य के अधिक निकट होगा। जो कुछ भी हो अब यह आप के हाथों में है और उचित स्थान पर है—इसका मुझे सन्तोष है। साथ ही मुझे आशा है कि मैं आप की अमूल्य सम्मति से भी वंचित नहीं रहूंगा।

इस में की रचनाएँ जिन पत्र-पत्रिकाओं में से ली गई हैं उनका मैं विशेष रूप से कृतज्ञ हूँ तथा उन साथी-सहयोगियों का भी, जिन्होंने मुझे हमेशा प्रोत्साहित ही किया है।

८-६, वर्कशाप गेट
खरगपुर (बी० एन० आर)
२६, मार्च १६५२

कुमार

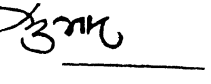

प्रकाशक का निवेदन

'सरिता' 'रिश्मि' आदि प्रत्रिकाओं में प्रकाशित नवोदित कवि श्री राजकुमारसिंह 'कुमार' की आधुनिक रचनाएँ पढ़ कर प्रभावित हुआ—इच्छा हुई कि इनकी चुनी हुई रचनाओं का एक छोटा-सा संग्रह प्रकाशित करूँ।

श्री 'कुमार' से पत्र-व्यवहार करने पर उन्होंने सहर्ष अपनी सहमति प्रगट की तथा चुनी हुई २६ कविताओं की प्रेस कापी बना कर भेज दी। मैंने अथ से इति तक सब रचनाएँ पढ़ीं, प्रायः सभी कविताएँ मुझे श्रेष्ठ सुन्दर और आकर्षक प्रतीत हुईं।

आधुनिक-कविता प्रेमी पाठकों को यह संग्रह रुचिकर प्रतीत होगा, ऐसी मेरी धारणा है।

रचनाएँ कैसी हैं, रचयिता सफल रहा है या असफल, इसका वास्तविक निर्णय तो विज्ञ पाठक, काव्य-मर्मज्ञ और निष्पक्ष समालोचक ही कर सकते हैं।

ओसवाल प्रेस
१८६, क्रोस स्ट्रीट, कलकत्ता।
राम नवमी सं० २००६

महालचन्द बयेद

नव संसार बसेगा कैसे—

बीती मधुगीतों की ऋतु है झंझा का संगीत चल रहा।
नव संसार बसेगा कैसे जब जीवन में शीत ढल रहा।

मृदु कलिका ने अधर खोल कर
ओस कणों में घोल-घोल कर
दी पराग बिखरा निशीथ में
चक्रवात में डोल-डोल कर;
सिसक रही नवला पंखुरियाँ
सुरभ धूलि में रोल-रोल कर

कौन कहेगा कलिका के है सम्पुट में मनमीत पल रहा।
नव संसार बसेगा कैसे जब जीवन में शीत ढल रहा।

मौन गगन के जर्जर तन के—
छिद्र चमकते मणि के कण से,
बरसाने लगता नभ चुपके—
निशि में अश्रु तुहिन के कण के;
सुबह सुबह धरती की छाती—
भीगी रहती तन से मन से।
कौन कहेगा छिपा व्योम में एक अग्नि का दीप जल रहा।
नव संसार बसेगा कैसे जब जीवन में शीत ढल रहा।

वसुधा के इस जन समुद्र का—
प्रति जन लगता एक विन्दु-सा,
पर जन जन के अन्तराल में—
क्षण-क्षण होता नृत्य रुद्र का;
नीड़ बनाते चुन चुन कण कण
पाने को सन्तोष उदर का।
कौन कहेगा जन-गण-मन को प्राणों का यह प्रीत छल रहा।
नव संसार बसेगा कैसे जब जीवन में शीत ढल रहा।

गीत

फिर सभी कुछ झेल लूँगा.
आज मेरी पीर ले लो!

देखता ही मैं रहा हूँ—
विश्व की निष्ठुर रवानी,
द्वन्द्वमय अनुभूतियों की
वेदना-पूरित कहानी।
दर्द है पाषाण में भी,
यह समझना भूल होगी—
यंत्रणा ही है जगत के
मूल की संचित कहानी,

भार-सा उर में छिपाए,
शाप ले कर चल रहा हूँ
मर्म में जो चुभ रहे हैं—
विष-बुझे वे तीर ले लो!
फिर सभी कुछ झेल लूँगा
आज मेरी पीर ले लो।

बढ़ सकेंगे क्या चरण वे
जो कभी भी रुक न पाएँ,
उठ सकेगा भाल क्या वह
जो कभी भी झुक न पाए ?

मेघ अम्बर से बरस कर
कब धरा पर आ सकेगा—
शीत सागर के हृदय का
यदि हमेशा चुक न पाए !

जल रही जो वर्त्तिका है
स्नेह-सिंचन से अनवरत,
क्या जलेगी, जागरण की—
फूँक भर यदि धीर ले लो ?

फिर सभी कुछ झेल लूँगा
आज मेरी पीर ले लो !

गीत

तुम भले ही कुछ कहो पर
मैं नहीं सम्मान लूँगा।
विश्व मेरे उदधि का
अमृत चुराना चाहता है,
शूल का पहना मुकुट
मुझ को भुलाना चाहता है,
छीन कर कण-कण हृदय की
आज मेरी रश्मियों को
जागने के ही प्रथम
मुझ को सुलाना चाहता है;

चन्द्र का वरदान दे कर
त्राण पाने को स्वयम् का—
सौम्य शिव को भावना का
विष गिलाना चाहता है।

विश्व विनिमय कर सका है
क्या किसी के दर्द का भी—
यह नहीं मैं जान पाया,
यह नहीं मैं मान लूँगा।

तुम भले ही कुछ कहो पर
मैं नहीं सम्मान लूँगा।

दर्द में अंगार होता
जग भला कब जानता है,
आह में हुंकार सोता
जग भला कब मानता है

आँक प्रतिमा को हृदय में
राह में पाषाण सोते—
धूल में उपवन समाया
जग भला कब जानता है;

क्रूर सारे ही नियम हैं,
कूट-छल से है भरा जग—
छोड़ अपनी ही महत्ता
जग किसे पहचानता है?

मैं नहीं आधार जग का,
जग स्वयम् पर ही टिका है—
त्याग अपनी साधना को
मैं नहीं अभिमान लूँगा।

तुम भले ही कुछ कहो पर
मैं नहीं सम्मान लूँगा।

गीत

प्यार सब कहते जिसे हैं,
मैं उसे तूफान कहता।
दीप की सौन्दर्य गरिमा
से शलभ पागी मचलता,
और अपनी ही कलुषता
में समूची-रात जलता,
सत्य का निर्मम प्रदर्शन
जग भला क्या सह सकेगा ?
सब इसे बलिदान कहते,
मैं इसे ऊफान कहता।
प्यार सब कहते जिसे हैं,
मैं उसे तूफान कहता।

देखती सूरजमुखी है
सूर्य की आँखों में हँस कर
मुस्कुराती झेलती, दैदीप्य
रवि का तेज दुस्तर,
इस दुसह निर्भीकता को
जग भला कब मान लेगा ?
सब इसे हैं स्नेह कहते,
मैं इसे अभिमान कहता ।
प्यार सब कहते जिसे हैं,
मैं उसे तूफान कहता ।
देव की आराधना में
हैं सभी श्रद्धा लुटाते
दीनता अपनी छिपा,
विश्वास का मरहम लगाते
भक्ति का होता मुलम्मा,
प्रेम का होता प्रदर्शन !
पूजते भगवान कह कर,
मैं इसे अपमान कहता ।
प्यार सब कहते जिसे हैं,
मैं उसे तूफान कहता ।

हँसो न अब तुम चाँद अकेले !

हँसो न अब तुम चाँद अकेले !
देखा तुमने कभी दहकते अंगारों पर घना कुहासा—
झोपड़ियों में बसता मानव लगता जैसे लुटा-लुटा-सा ?
देखा तुमने कभी जमीं पर बसने वाले इन्सानों को—
जिसने तन-मन-जीवन अपना लुटा दिया है हैवानों को ?
कभी न देखी होगी तुमने भूखों-अधनंगों की टोली ।
कभी न देखी होगी तुमने जीवित नर लाशों की होली ।
तुम क्या कोई भी न हँसेगा, कष्ट अगर ऐसा ही झेले !
हँसो न अब तुम चाँद अकेले ।

तुमने सोचा होगा जग में, तुम हो बस प्यासा चकोर है !
तुमने सोचा होगा पूरब-पश्चिम दो ही ओर छोर हैं !
देखी तुमने नयन कोर में बसने वाली घनी घटाएँ ?
सोचा तुमने कभी तनिक भी, आओ इनकी पीर हटाएँ ?
देखी होगी कभी कभी तो चलती-फिरती ठठरी तुमने ?
सोचा तुमने जिन्हें खिलौना, कभी न छूना बिजली इनमें !
तुम क्या कोई भी न हँसेगा, बोझ अगर ऐसा ही झेले !
हँसो न अब तुम चाँद अकेले।

तुमने सोचा मेरी किरणों में, है अमृत धार नशीली—
इनकी आँखों से देखो तो सिर्फ लगेगी पीली-पीली !
एक नहीं धरती पर ऐसा इनकी तो आबादी पूरी।
इनके बल से चलती दुनिया, हँसती इन पर है मजबूरी।
इनसे मिलो हँसो तो जानूँ, देखो क्या होती मजबूरी ?
चिल्लाऊँगा मैं कोने से, चाँद तुम्हारी हँसी अधूरी !
तुम क्या कोई भी न हँसेगा देखे यदि मुर्दों के मेले !
हँसो न अब तुम चाँद अकेले।

गीत

ठोकरें खा-खा पगोंकी धूल मुसकाने लगी है,
आँसुओं की बूँद में ऊफान पैदा हो रहा है।
बढ़ रही काली घटाएँ बून्द की बारात लेकर,
प्यास धरती की मिटाने की सभी औक़ात लेकर,
ओढ़नी में मुंह छिपाए हँस रही हैं बिजलियाँ भी
आ रही हैं साँझ पीछे से अँधेरी रात लेकर;
मौन तकती हैं दिशायें, पूछती निस्तब्धता है—
कौन गुजरेगा इधर से आज झंझावात लेकर ?
लौटते निज घोसलों को भीत से खग वृन्द बोले—
बादलों की ओट में तूफान पैदा हो रहा है !!
थक गया है आदमी, तूफान मँडराने लगा है,
शूल खिलते ही रहे पर फूल मुरझाने लगा है;
रात हँसती है कि दुनिया सो रही सर्वस्व खो कर—
आदमी के भेष में शैतान इतराने लगा है;
मंदराचल मूक है, मंदाकिनी चुपचाप बहती—
साँझ हँसती है कि देखो चाँद शरमाने लगा है !
एक हलचल-सी मची जब यह कहा आकाश ने भी—
लो नया सूरज उगा, दिनमान पैदा हो रहा है !!

धरती मेरी, अम्बर मेरा

धरती मेरी, अम्बर मेरा, सूरज-चाँद सितारे मेरे,
मेरा इनसे अपनापन है, मुझको इनसे प्यार है।
मेरा स्नेह अमर है जग में और सभी कुछ नाशवान है,
मेरे जीवन का क्रम ही तो युगों-युगों का सामगान है,
कितनी बार बना हूँ मैं पर उजड़-उजड़ कर धूल बन गया-
मेरा मन युग-युग का वासी तन तो मेरा मेहमान है;
आदि सृष्टि से मेरा जग में चलना ही इतिहास रहा है—
पथ का श्रम ही मेरी निधि है, क्रम मेरा आधार है।

मुझ में गंगा-यमुना बहतीं और धधकती सदा आग भी,
मेरे श्रम से सदा अमर है शस्य श्यामलाका सुहाग भी,
वसुधा में है वैभव हँसता, पलता जीवन मेरे श्रम से—
मुझ में ज्वाला भरी गरल भी, सुमनोंका मादक पराग भी;
मेरा यह लघु जीवन ही तो जग की सुषमा बना हुआ है,
मेरी सीमित हस्ती में ही युग की छवि साकार है।

आज दिशाएँ मौन, पवन में भय की धारा प्रवह मान है,
दानव की सत्ता के भय से कँपती धरती, आसमान है,
योगी हिमगिरि के ललाट पर लगी उभरने हैं रेखाएँ—
मेरी धरती पर मानव की कालिख ने खींचा निशान है;
मैं एकाकी नहीं जगत में, मानवता पर बन्धन कैसा ?
रोक न पाएँगी सीमाएँ, जग मेरा परिवार है।

मैं तो जीता सदा रहूँगा, जीने की ही मुझे आन है—
शोषण को मिटना ही होगा, मानव का जीवन महान है,
दानव अपना दमन चक्र भी क्यों न चला ले जितना चाहे,
'मरा नहीं इन्सान कभी भी'—कहती धरती, आसमान है;
आज हमारी मांग कि जग को शांति चाहिए शांति चाहिए!
मानवता को सदा जगत में जीने का अधिकार है।

धरती मेरी, अम्बर मेरा, सूरज-चांद सितारे मेरे,
मेरा इनसे अपनापन है, मुझको इनसे प्यार है।

गीत

चले प्रभंजन झूम-झूम कर
दीपक मेरा हँसे, जले।

घटाटोप है, तम ही तम है
क्षुब्ध-उसाँसें हैं रजनी की—
उदित हुआ शशि क्षितिज-द्वार पर
किन्तु रश्मियाँ अब भी फीकी;

आशाओं की बाती जलती
नव विकाश के आवाहन को,
ताक रही हैं आसमान को
फटी-फटी आँखें धरती की—

कवि, गा दो वह दीप-राग—
खिल पड़े अधर, आँखें मुस्का दें
मिले जगत को नव-प्रकाश,
जा छिपे अँधेरा दिया तले!

ऋतुपति मौन विथा से अपनी
रास-रंग से भ्रमर विमुख हैं,
पतझर हँसती है डालों पर
उसे न जाने कैसा सुख है ?
मौन पपीहे बैठे उन्मन,
कोयल गाना छोड़ चुकी हैं
पवन घूमता है आवारा,
उसे न जाने कितना दुख है;
कवि, गा दो वह प्रीत-राग—
खिल पड़े सुमन, धरती मुस्काये
मिले कली को नव-पराग,
हँस पड़े सवेरा गगन-तले !

ज़िन्दगी के स्वप्न मेरे

ज़िन्दगी के स्वप्न मेरे गान के आधार होंगे।
आज के विश्वास मेरे कल सभी साकार होंगे।
रश्मियाँ बन कर खिलेंगे
मधुर मेरे प्राण के स्वर,
दीप बन कर के जलेंगे
नित्य मेरे गान के स्वर,
क्षीर-सा हम पी चलेंगे
पीर सारी ज़िन्दगी की –
पतझरों में खिल उठेंगे
फूल बन निर्माण के स्वर;
शृङ्खलाएँ टूट चरणों में गिरेंगी अर्चना को—
प्राण, मेरे गान युग की वीण की झनकार होंगे।

शूल के शव पर कली का
जब हमेशा राज होगा,
हर सुमन की ज़िन्दगी का
तब नया अन्दाज होगा,
चीर मरु का वक्ष पनपेंगे
नए पौधे धरा पर—
मौत की तब मौत होगी,
ज़िन्दगी का साज होगा,
लोचनों में घिर उठेंगे विकल सौ-सौ प्यार के क्षण,
एक ही स्वर में बँधे हर ज़िन्दगी के तार होंगे।

———

रात जब होगी

रात जब होगी, सितारे सो रहे होंगे—
मिलन की लहरियों पर तब नया तूफ़ान डोलेगा।

कि नर्त्तन कर रही होगी जगत में नींद पलकों पर
सिमटती कमलिनी होगी कि तम की ओढ़ कर चादर
तुहिन के कण कि तब निःस्वर ढुलकते पात से होंगे—
विजन में गूँजती रह-रह तभी पदचाप आएगी।
प्रतीक्षा खोल कर अलकें गगन की ओर ताकेगी—
प्रणय भी जुगनुओं की ओट में से पंख खोलेगा।
मिलन की लहरियों पर तब नया तूफ़ान डोलेगा।

कि आँचल में छिपा शशि को धरा तब सो रही होगी,
नहीं अब चाँद निकलेगा, चकोरी सोचती होगी—
कहीं चुप जा रही होगी फिसलती यामिनी नीरव,
तभी चुपचाप कोई कुछ कहेगा, गुनगुनायेगा—
कि शायद सो रही हो तुम, कि दुनिया सो रही है जब
कि कोई आज काहे को हँसेगा और बोलेगा—
मिलन की लहरियों पर तब नया तूफान डोलेगा।

अधर में छा चुकेंगे तब किसी की कामना के घन,
बरसने को उठेगा घिर किसी की आँख का सावन,
क्षितिज का खोल वातायन, न जाने कौन झाँकेगा—
गगन तब मूँद कर पलकें हँसेगा, मुस्कुरायेगा।
कि धरती के किनारे से किरण की रेख फूटेगी—
समुन्दर हँस पड़ेगा तब, हिमालय आँख खोलेगा।
मिलन की लहरियों पर तब नया तूफान डोलेगा।

———

गीत

मिला मुझे अपमान सदा पर
मैंने तो मुसकान दिया है।

मुझको नहीं स्वयम् पर निष्ठा—
मैं तो निष्ठावान रहा हूँ,
तेरी परख भरी क्षमता का—
मैं ही तो अभिमान रहा हूँ;

मैंने क्षण-भंगुर जीवन में
सदा हलाहल पीना सीखा—
परखा तुम ने सुमनों को, मैं—
शूलों को पहिचान रहा हूँ।

जीवन भर तुमने तो केवल
आसमान की ओर निहारा—
मुझे तमोमय कहते हो पर
मैंने तो दिनमान दिया है।

मूल्य भले ही जितना हो पर
इसका मुझे गुमान रहा है—
तुमने समझा ध्वंस जिसे है
वह मेरा निर्माण रहा है;

हँस लो मुझ पर किन्तु हास्य भी
मेरा ही तो दिया हुआ है—
तुमने पागलपन समझा जो
मेरा जीवन गान रहा है।

जीवन अपना बेच-बेच कर
मैंने तो जीवन-निधि दे दी—
पत्थर उसे समझ लो तुम पर
मैंने तो भगवान दिया है।

मिला मुझे अपमान सदा पर
मैंने तो मुसकान दिया है।

———

गीत

किसी बीते हुए क्षण की
मधुर झनकार बन जाओ।
किसी रूठे हुए दिल के लिये
मनुहार बन जाओ।

नहीं मुश्किल किसी के
धूल में सपने बिखरते हों,
नहीं मुश्किल किसी की
कामना के फूल झरते हों,

तुम्हारे प्यार का मरहम
कि उसको ज़िन्दगी देगी—

तनिक हँस दो घटाओं का
क्षणिक शृङ्गार बन जाओ।
किसी वीरान मरघट के लिये
मलहार बन जाओ।

सरल है क्रूर बन करके
कहीं अंगार बरसा दो,
सरल है ज़िन्दगी भर को
किसी के प्राण तरसा दो,
नहीं आसान पल भर को
मगर मुस्कान ला पाना —
कि बरसो मेघ बन करके
अमिय की धार बन जाओ।
किसी आकुल पपीहे के लिये
त्योहार बन जाओ।

कठिन है स्नेह को अपने
हमेशा ही भुला रखना,
कठिन है देवता को निज
हमेशा ही भुला रखना,
नहीं आसान है इन्सान से
इन्सान का रिश्ता—
जलन को चूम लो उसके
हृदय का प्यार बन जाओ।
किसी हारे हुए मन के लिये
संसार बन जाओ।

———

कह उन्हें दो—

त्याग दूँ मैं लक्ष्य अपना यह न मुझ से हो सकेगा—
आँधियाँ सर पर भले ही लाख आ कर डोल जाएँ।

आज मेरे पग बढ़ाते ही गगन झुकने लगा है,
आज मेरे पग बढ़ाते ही पवन रुकने लगा है,
हास्य में भी व्यंग जिनके था भरा वे आज चुप हैं—
तेज मेरा देख अग-जग का हिया दुखने लगा है;

मैं स्वयं को छल रहा था आज पथ में पा गया हूँ—
कह उन्हें दो आज मुझ से बोल मीठे बोल जाएँ।

कौन कह सकता इसे है फिर न शायद मिल सकें हम,
राह में पाषाण बन कर फिर न शायद हिल सकें हम,
धूल की उठ सैकड़ों तह कोख में हमको छिपा लें—
याकि अपनी ही ठठरियों पर खड़ी मंज़िल करें हम;
माँगने पर दो घड़ी का स्वर्ग ही तो यह मिला है—
कह उन्हें दो प्यार की मधु माधुरी अब घोल जाएँ।

आज विधि से छीन अपना ओज लाने जा रहा हूँ,
आज धरती में नया जग खोज लाने जा रहा हूँ,
इक नई दुनिया बसाने के नये सामान लाने—
स्नेह जिसमें हो भरा वह सोज लाने जा रहा हूँ;
यह पुरानी रीत छोड़ो क्या धरा है चीथड़े में—
कह उन्हें दो लोचनों में भर नया हिल्लोल जाएँ।

———

गीत

गान में छाने दो तूफान!
स्वर-लहरी वह गान नहीं है,
जिसमें गतिमय प्राण नहीं है,
नहीं है जिसमें संघर्षों की—
तरुण-अरुण-सी तान;
गगन में छा जाने दो घन,
चमकने दो घन में अरमान!
गान में छाने दो तूफान!!
उद्यत उर सागर की लहरें,
उमगें, उछलें कहीं न ठहरें,
मच जाने दो हलचल, तट का—
हो जाए अवसान;
पृथ्वी दिशा बदल कर चले,
जलाए उर में प्रलय महान!
गान में छाने दो तूफान!!

जीवन का यह तर्क छोड़ दो,
झंझा का वह दर्प तोड़ दो,
चाँद-सितारों में विहँसेगा—
सुरभित मौन विहान;
टिमटिम जलें गगन के दीप,
करने धरती का सन्मान!
गान में छाने दो तूफान!!

— — —

गीत

आग नहीं वह जो बुझ जाए!
लगा समुन्दर लहरें लेने
आना हो जिसको आ जाये—
गई पिया के पास तरंगिनि
पत्थर-टीले रोक न पाए!
मेघ घिरे, बिजलियाँ कौंधने—
लगीं, गगन में धूल भर गई,
दिनकर चीर हँसा तम काला
आँधी जितनी भी इतराये!
रुके न बलिपथ के सेनानी
पूजा के सामान देख कर—
मंज़िल उसके लिए नहीं जो
पथ में चलने से रुक जाए!
आग नहीं वह जो बुझ जाए।

मेरु हसा, निस्तब्ध पवन हो
गया, चीखने लगीं दिशाएँ—
गगन हुआ म्रियमाण, धरा पर
जलती देखी चिता-शिखाएँ।

उड़ी चिनगियाँ बोलीं नभ से—
भला नयापन इसमें क्या है?
जीने वाला नहीं जला वह
जलता शव, निस्पन्द-शिराएँ!

फूलों से अंगारे टपके,
धूल लगी कहकहा लगाने—
जीवन उसके लिए नहीं जो
कदम कदम पर झुक-झुक जाए!

आग नहीं वह जो बुझ जाए।

— ——

शक्ति पैदा कर रहा हूं

ज़िन्दगी का क्रम भले ही टूटता-बनता रहे नित,
मैं हृदय में द्वन्द की आसक्ति पैदा कर रहा हूँ।
शेष मुझ में श्वास कितने बच रहे, है ज्ञान मुझको;
छोड़ता हूँ मैं नहीं विश्वास, है अभिमान मुझको;
मैं निराशा में सदाशा की निरन्तर लौ जलाए
चल रहा हूँ चीर तम को, बिजलियाँ हैं गान मुझको;
मौत मेरा क्या करेगी, भय नहीं जब जानता हूँ
पत्थरों में प्राण भर दूँ है यही सन्धान मुझको,
मूक जो पाषाण-प्रतिमा व्यंग है परमात्मा पर,
आदमी से प्यार है तब क्या भला भगवान मुझको;
खींच लाए काल के भी गाल में से ज़िन्दगी के
आज अपने में वही मैं शक्ति पैदा कर रहा हूँ

खेल,—केवल खेल ही है, श्वास का व्यापार मुझको,
ज़िन्दगी का अर्थ ही है मौत से बस प्यार मुझको,
शेष जीवन-कोष में होंगे यही संघर्ष के क्षण
जय-पराजय, नियम-कारण हैं सभी निस्सार मुझको,
पंथ मेरा जोहता है दीप कुटिया का तिमिर में
और स्वागत में खड़ा है शूल का संसार मुझको;
कल्पना के स्वप्न नयनों में सँजो कर क्या करूंगा
कंटकों से जूझना ही है सदा त्योहार मुझको;
जो हटा कर बढ़ चले नित क्रूर काली आँधियों को
मैं स्वयम् पर वह अनोखी भक्ति पैदा कर रहा हूँ।

———

मैं अपना भगवान हूँ

तुम अतीत की करुण-कथा, मैं युग का जलता गान हूँ।
तुम प्रतिमा के आराधक हो, मैं अपना भगवान हूँ।

तुमने कहा कि यह जीवन तो सपना है, निर्मूल है,
तुमने कहा कि तूफानों से लड़ना मेरी भूल है,
तूफानों से लड़ना मेरे जीवन का व्यापार है—
जो संघर्षों का आराधक, उसका यह संसार है;

तुम ढहते जीवन की गाथा, मैं युग की पहचान हूँ।
तुम प्रतिमा के आराधक हो, मैं अपना भगवान हूँ।

तुमने रोका मुझे कि रुक जा, ग्रह तेरे प्रतिकूल हैं,
तुमने रोका मुझे कि पागल! तेरे पथ में शूल हैं,
शूलों को दलना ही मेरे जीवन का विश्वास है—
जो संघर्षों का आराधक, मंज़िल उसके पास है,

तुम गत-जीवन की छाया, मैं जलता हुआ निशान हूँ।
तुम प्रतिमा के आराधक हो, मैं अपना भगवान हूँ।

तुम कहते हो पागल है यह, पँथ से यह अनजान है,
बाधाओं से भरी डगर है, पग-पग पर तूफान हैं,
बाधाओं में चलना ही तो मेरा जीवन गान है—
जो संघर्षों का आराधक, अमर वही इन्सान है;

तुम गत-युग की करुण-रागिणी, मैं नवयुग का प्राण हूँ।
तुम प्रतिमा के आराधक हो, मैं अपना भगवान हूँ।

मृत्यु-जीवन

मृत्यु अवश्यम्भावी है कह रहीं चिताएँ—
किन्तु धधकते शव की वह उपहास नहीं है।

मरुस्थली ने गाए अब तक बंजर गाने,
औ' मरघट की राख छेड़ती मृत्यु-तराने,
पल-पल दीप बुझा जाते झंझा के झोंके
एक दीप में जल-जल जाते सौ परवाने;

मृत्यु चिरन्तन-जीवन के पथ का विराम है
पर जीवन को चलने से अवकाश नहीं है।

दो साँसों का खेल ज़िन्दगी है निश्चय ही,
कहना मुश्किल मिले हार या मिले विजय ही,
इस शंका में गति जीवन की रुक न सकेगी,
क्योंकि लक्ष्य है अन्तिम जीवन का तो जय ही;

काली-काली रातें आती-जाती ही हैं—
पर इससे भयभीत कभी आकाश नहीं है।

दूर क्षितिज के पास धरा से गगन मिल रहा,
नई ज़िन्दगी लिए जनम पर मरण चल रहा,
नित्य घटाएँ काली-काली घिर-घिर आतीं—
झंझावातों में जीवन का सुमन खिल रहा;

जीवन-पथ की नेहमयी वह शान्ति-निकेतन,
मृत्यु टूटती साँसों का इतिहास नहीं है।

———

मेरा जीवन, मेरे गीत

मेरे जीवन के स्वर-स्वर में परवशता का गान नहीं है।
मेरे गीतों का अधरों में बंध जाना आसान नहीं है।

तट से बँधे समुन्दर का मैंने न कभी गुणगान किया है,
सदा जूझने वाली लहरों का मैंने सम्मान किया है,
यह भी सच है युग-युग से सागर की अलहड़ता जीवित है—
लेकिन इस अलमस्ती का भी लहरों ने निर्माण किया है;

माना मैंने तट की बाँहों से लहरों का त्राण कठिन है,
किन्तु लहर का भी कूलों में बँध जाना आसान नहीं है।

टूटे कितने तारे अम्बर से मुझको अनुमान नहीं है,
फूट-फूट कर रोया सावन इसका मुझको ज्ञान नहीं है,
बाँध चरण में घुँघरु छमछम नाची प्रलयंकर की माया
लेकिन मेरे प्राण-दीप की बुझ पाई मुसकान नहीं है;

माना एक हवा का झोंका सौ-सौ दीप बुझा सकता है,
बुझ जाए पर दीप ज़िन्दगी का इतना आसान नहीं है।

मेरे जीवन में पतझर की पायल की झनकार नहीं है,
मेरा है इतिहास कि जिसमें जलता-बुझता-प्यार नहीं है,
मेरी किस्मत का अब तक भी हो न सका पाषाण नियन्ता
मेरी गति-विधि का प्रतिबन्धक मन की करुण पुकार नहीं है;

ज्ञात मुझे स्वर के सरगम में गीत सभी बन्दी बन जाते,
किन्तु ज़िन्दगी के स्वर-लय का बँध जाना आसान नहीं है।

———

चल रहा हूँ !

जब प्रलय की घिर रही नभ में घटाएं
मैं सृजन के गीत गाता चल रहा हूं।

खोल घूँघट रोष जागा है गगन का,
फिर विकल आक्रोश जागा है पवन का,
बज रहा है एक अलहड़ स्वर कि जैसे–
हर दिशा में आज जीवन औ' मरण का;

सिन्धु के विश्वास को सम्बल मिला है,
क्षुब्ध उर की वेदना का हल मिला है,
बाँधने भुजपाश में आकाश का तन–
हर लहर को आँधियों का बल मिला है;

हिल रही है नाव तिनके-सी लहर पर
किन्तु तट के गीत गाता चल रहा हूँ।

क्या हुआ यदि दूर मुझसे है किनारा,
क्या हुआ यदि मिलन पाया जो सहारा,
चल रहा हूँ क्योंकि मेरे लक्ष्य-सा ही—
दूर कोई टिमटिमाता है सितारा;

यह न हो सकता नियति से झुक रहूँ मैं,
औ' कृपाओं के लिए इच्छुक रहूँ मैं,
बाँध लूँगा मुट्ठियों में साँस को भी—
है कठिन मुझको कि भय खा, रुक रहूँ मैं,

इस गरजती ज़िन्दगी की हर लहर पर
मौत को अपनी नचाता चल रहा हूँ।

भय भला क्या यदि अंधेरी रात आए,
नाचते-से नित्य झंझावात आएं,
क्योंकि मैं इन्सान हूँ, चलता रहूंगा—
राह में अपनी प्रगति की लौ जलाए;

साँस में अपनी विहँसता दिल लिए हूँ,
औ' भुजाओं में कठिन मंज़िल लिए हूँ,
चल रहा हूं इस भयावह कालिमा में—
क्योंकि मन में प्रात की झिलमिल लिए हूँ;

इस तमोमय ज़िन्दगी की बीन पर मैं—
लय प्रभाती की बजाता चल रहा हूँ।

———

लेखनी का मान

जिन्दगी से प्यार है तो मृत्युका भय,
राह का व्यवधान हो सकता नहीं है।

हैं खड़े संकट अनेकों जिन्दगी की हर डगर पर,
खिंच रहीं भय की लकीरें आज जीवन के अधर पर,
मानता हूं क्या ठिकाना इन घुमड़ते बादलों का—
कौन जाने हंस पड़ें कब ये प्रलय-तूफान सर पर,
किन्तु यह भी सत्य है चिरकाल से ही मुस्कुराता—

जल रहा जो दीप मानव के हृदय का,
वह कभी भी म्लान हो सकता नहीं है।

है चिरन्तन सत्य जीवन का प्रगति की प्रेरणा में,
बज रहा है एक ही स्वर हर मनुज की चेतना में,
पंथ के हर एक पत्थर का धरम है क्रूरता ही—
है न अन्तर आदमी के दुःख-सुख में, वेदना में,
है बँधा हर एक प्राणी स्नेह-बन्धन में प्रकृति से,
प्यार जिसको है नहीं इन्सान से ही,
वह कभी इन्सान हो सकता नहीं है।

आज तक विश्वास जीवन का अमर सम्बल रहा है,
आज लेकिन आदमी को आदमी ही छल रहा है,
तथ्य यह भी है कि लाखों बार घिर आए प्रलय-घन—
ज़िन्दगी का कारवाँ फिर भी निरन्तर चल रहा है;
छूट जाए मध्य में ही श्वास यदि तो साधना क्या ?
जो न गायक ज़िन्दगी के गीत का,
वह लेखनी का मान हो सकता नहीं है।

———

मैं

बाँधना मुझको कठिन है सिन्धु का विस्तार हूँ मैं।
जो न बाँहों में समाए वह असीमित प्यार हूं मैं।

दीप-सा मैं जल रहा हूं, दे रहा जग को उजाला,
जूझता है नित्य मुझ से ग्रासने को तिमिर काला;
जो किसी का नाश कर दे वह चुनौती हूँ नहीं मैं,
जल रहा जो स्नेह ले कर वह तिमिर-शृंगार हूँ मैं।

वासना की लौ समझ ही देखता जलती शमा को,
रूप ही देखा शलभ ने पर न देखा आतमा को;
प्यार मुझको है सभी से पर नहीं मुझ में पिपासा,
बाँधना मुझको कठिन है दीप का अंगार हूँ मैं।

रात कहती है कि सारी चांदनी मेरे लिए हो,
सोचता है चांद भी मधुयामिनी मेरे लिए हो,
क्या हुआ जो प्यार का आधार बन पाया नहीं मैं,
जो न हंसतों को रुलाए वह मधुर व्यवहार हू मैं।

मैं नहीं यह जानता हू कौन अपना या पराया,
बोलना हमता सभी मे जो कि मेरे पास आया,
बूँद बन कर जो बरस जाए धरा पर मेघ हू वह,
जो न आखों में समाए अश्रु पारावार हू मैं।

चूमती है हर सुमन को मैं सुबह की धूप हू वह,
घास पर भी लोटता जो मैं प्रणय का रूप हू वह,
वृक्ष की हर शाख पर चढ़ घोंसलों में झांकता भी,
जो किसी पर बिक सकेगा वह नहीं संसार हू मैं।
जो न बाँहों में समाए वह असीमित प्यार हू मैं।

मेरी ममता, मेरा प्यार

मेरी ममता में प्राणों के बन्धन का व्यापार नहीं है ।
मेरे मन का प्यार किसी के यौवन का शृंगार नहीं है ।
मेरी पूजा किसी देवता के चरणों का फूल नहीं है,
मेरी निष्ठा किसी नियोजित अभिनय के अनुकूल नहीं है,
मेरे जीवन में वियोग की घड़ियाँ शूल नहीं बन पाते—
मेरा स्नेह किसी के यौवन के सागर का कूल नहीं है;
मेरी श्रद्धा पत्थर का भगवान भले ही बन जाए पर
मेरा प्यार किसी के पथ में पत्थर की दीवार नहीं है ।

मेरे जीवन की लहरों में सोया-सा-तूफान नहीं है,
मेरे मन में अरमानों का बुझता-बुझता गान नहीं है,
मुझको रूठे हुए विधाता से वरदान नहीं लेना है—
मिट जाए निर्दय के हाथों मुझ में वह मुसकान नहीं है,
सह लूँगा यदि मुझे कहोगे नहीं किसी माथे का चन्दन—
किन्तु किसी की मधुमय मस्ती ही मेरा संसार नहीं है।

मुश्किल क्या यदि मेरा मन को लहरों पर अधिकार रहा है,
मुश्किल क्या यदि मेरा अपनों से ऐसा व्यवहार रहा है,
अनुयायी कैसे बन जाऊँ किसी पुरानी परम्परा का—
मेरा सारा जीवन ही जब बन्धन का प्रतिकार रहा है;
मैंने चार दिनों के वैभव को सर्वस्व नहीं माना है—
मेरा प्यार किसी फुलवारी के माली का प्यार नहीं है।

———

मैं जीवन का राही

जो लहरों से टकरा कर नित टूट गिरे वह कूल नहीं मैं।
तप्त हवा के झोंकों से जो मुरझा जाए—फूल नहीं मैं।
मुड़ जाए प्रत्येक मोड़ पर मैं न तरंगिनि की वह धारा,
बहे पराजित की आँखों से मैं न विवश वह आँसू खारा,
कभी नियति के इंगित से जो निराधार हो जाए वह मैं—
आसमान के शून्य हृदय का टलमल करता नहीं सितारा;
मैं अपनी मंज़िल के पथ पर जीवन-मरण लिए चलता हूँ,
संकेतों पर नाच उठे जो वह जीवन की भूल नहीं मैं।

क्रूर नियति के हाथ न मेरे मस्तक को सहला पाते हैं,
क्षुब्ध बिजलियाँ, काले बादल मुझे नहीं दहला पाते हैं,
मैं वह नाविक नहीं कि जिसको लहरें आत्मसात् कर पाएँ
नित्य प्रभंजन पथ में मेरे आते और चले जाते हैं;
मिट जाए ज़िन्दगी राह में मंजिल के आने से पहले—
हो सकता है, किन्तु लक्ष्य से हुआ कभी प्रतिकूल नहीं मैं।

मैं वह किरण नहीं जो काली बदली में छिप जाया करती,
मैं वह दीपक नहीं कि जिसकी ज्योति सदा बुझ जाया करती,
मैं वह जीवन-गान नहीं जो अधरों की मुस्कान लूट ले—
मैं वह वंशी नहीं कि जो नित करुण रागिनी गाया करती;
हारी-थकी-झुकी पलकों में चुभता रहा निरन्तर ही मैं,
किन्तु कभी विजयी चरणों में चुभ जाए वह शूल नहीं मैं।

मैं जीवन का राही अधरों पर मुसकान लिए चलता हूँ,
मन में नई उमंग, प्राणों में तूफान लिए चलता हूँ,
मेरी मंज़िल सदा सुहागिन, मैं उसका संसार सुनहला—
अंधकार की छाती पर मैं नव दिनमान लिए चलता हूँ;
क्यों न भले मिट्टी बन जाए किसी समय यह तन मेरा पर
एक हवा के झोंके से जो उड़ जाए वह धूल नहीं मैं।

———

नई ज़िन्दगी

उदयाचल से
बालारुण की नन्हीं किरणें चली आ रहीं--
किन्तु धुन्ध की मैली चादर
अभी धरा से उठ न सकी है।

निखर रहा आँखों के आगे
धुँधला-धुँधला चित्र कि जैसे—
आ जाती है
खोई-खोई याद किसी की।

देख रहा हूँ—
उठ गया है बादलों तक
शिखर-सा मस्तक किसी का;
और उसके सामने
झुक गई है आज नीचे
शून्य की-सी देह जैसे आसमाँ की।

लग रहा उसकी भुजाओं में कि जैसे—
बँध चुके हैं
लाख वर्षों के पुराने क्रूर झंझावात;
और उसकी बन्द-सी उन मुट्ठियों में—
घुट रही है आज जैसे साँस उनकी।

और कुहरा फट रहा है—
उसी तरह ज्यों किसी किरण के
छू देने से
फट जाया करता है दिल
अन्धकार का काला-काला।

देख रहा मैं—
अवयवों से उस अतनु के
रेखाओं-सी
उभर रही हैं नई शिराएँ !

और थोड़े-से समय के बाद—
थप्पड़ों से गर्म किरणों के
मुँह झुलस जाएगा कुहासे का।
तब किसी की आत्मा का सर नज़र आने लगेगा।
अभी तो लग रहा है कि मेरे सामने जैसे—
नई ज़िन्दगी का नक्शा उभर रहा है।

——

स्फुट

प्रातः स्मरणीय तुलसी के प्रति

रामायण के महा प्रणेता
नेता अमर कहानी के।
भारतीयता के प्रतीक तुम
जीवन कविता रानी के।
बसी हुई तव वाणी में है
कितनी सुमधुर-सी सुवास,
जीवन का दीपक जलता ज्यों
स्पन्दित होता मृदुल श्वास,
परश जिसे क्षय होता कितने
दर्प, कला-अभिमानी के!
भारतीयता के प्रतीक तुम
जीवन कविता रानी के!!
वाल्मीकि के बाद अहो है!
कितने थे युग बीत गए,
कितनी वर्षा की ऋतु आईं
कितने आतप, शीत गए,

तभी युगों के चिरप्रतीक बन
आए अमर कहानी ले !
भारतीयता के प्रतीक तुम
जीवन कविता रानी के !!

राम नाम लघु उच्चारण में
तुमने मुक्ति छिपा दी है,
और लेखनी की धारा में
गंगा अरे बहा दी है,

किया राम को अमर तुम्हीं ने
अपनी शाली, वाणी में !
भारतीयता के प्रतीक तुम
जीवन कविता रानी के !!

गूंज उठी थी तेरे स्वर में
एक बार युग की वाणी,
गूढ़ ग्रन्थियाँ सुलझाने हित
डोले थे शत शत प्राणी,

अरे वरद हे पुत्र तुम्हीं थे
माता वीणापाणी के !
भारतीयता के प्रतीक तुम
जीवन कविता रानी के !!

कर्त्तव्य, प्रेम के दुर्गम पथ पर
दूर दूर तक बढ़े तुम्हीं,
रुकी नहीं पर कहीं लेखनी
उच्च शृंग पर चढ़े तुम्हीं,

किया तुम्हीं ने सिद्ध अरे यह
बल है कवि की वाणी में !
भारतीयता के प्रतीक तुम
जीवन कविता रानी के !!

आज प्रिय, दीपक जलाने दो !

आज प्रिय, दीपक जलाने दो !
उमंगों का अखिल में आज पारावार छाने दो,
निशा को भी प्रतीक्षा का, अरे अभिसार पाने दो,
जगत को प्यार पाने दो, कलुष-कल्मष मिटाने दो !
आज प्रिय, दीपक जलाने दो !
व्योम के भी शून्य उर में धूम छाने दो अगुरु की,
कल्पना साकार होवे आज मरु में कल्पतरु की,
कोटिशः दीप लख-लख कर शलभ को खिलखिलाने दो !
आज प्रिय, दीपक जलाने दो !
मलिन मन के ऊजले हों, सरस सिहरन चूमने दो,
आज अधरों पर अधर को मुस्कुराने-झूमने दो,
विरह से आकुलों को भी मिलन के गीत गाने दो।
आज प्रिय, दीपक जलाने दो !
आज प्रांगण में हजारों ही सितारे झिलमिलाएँ,
सतत युग की साधनाएँ एक नव आकार पाएँ,
आज दीपों के उजाले में नई दुनिया बसाने दो।
आज प्रिय, दीपक जलाने दो !

जलो जलो तुम दीपावलियाँ !!

जलो जलो तुम दीपावलियाँ !!
नगर-नगर औ डगर-डगर से—
मिटे तिमिर का कलिमल-शासन,
आज छिपा लो पीर हृदय की,
जन-मन की प्रिय मंजूषा बन;

पूरित कर दो प्राण, आयु से
गृह, वातायन, आँगन, गलियाँ !
जलो जलो तुम दीपावलियाँ !!

आज उमंगों से परिपूरित—
शस्य-श्यामला, दसों दिशाएं,
सुषमित सलिला धरती पर हैं—
दीप्तिमान नव दीप शिखाएं;

युग युग की तुम सजग चेतना,
कोटि कोटि की प्रखर प्रहरियाँ !
जलो जलो तुम दीपावलियाँ !!

अमर प्रेरणा भर दो हिय में,
नहीं और पाथेय चाहिए,
आज देश को मंज़िल तक बस
पहुँचाने का ध्येय चाहिए;

पोधों से फूटें शाखाएं,
नभ की ओर बढ़ें वल्लरियाँ !
जलो जलो तुम दीपावलियाँ !!

सागर की लहरों से बच कर—
नौकाएँ तट पर आ जाएँ,
और मनुज के माथे पर की
शत युग की सिलवट मिट जाएँ;

जन-गण-मन में अमृत भर दो,
खिलें सुमन की मंजुल कलियां।
जलो जलो तुम दीपावलियां॥

नाची छमछम किरण-परी !

आज नहीं रे, तम के बन्धन
नाची छमछम किरण-परी !

छलक उठा जीवन का प्याला,
अग-जग से भागा अँधियाला,
सुन्दरियों ने दीप जलाए,
नाच-नाच हँस पड़ा उजाला;

फूट गई रे, आज धरा पर
सहसा ज्योति भरी गगरी !
नाची छमछम किरण-परी !

धरती पर तारे मुसकाए,
नभ ने स्नेह-अश्रु ढुलकाए,
धरती का शृंगार देख कर
हुईं अचानक चकित दिशाएँ;

भागी फिरती है धरती से
आज अमावस डरी-डरी!
नाची छमछम किरण-परी!

आज प्रभंजन-चरण मन्द हैं,
दूर सभी दुख-द्वेष-द्वन्द हैं,
उमड़ा धरती पर नव जीवन—
हँसे नए आलोक-छन्द हैं,

आज नहीं रे, तम का शासन;
बन्धन मुक्त हुई नगरी!
नाची छमछम किरण-परी!